✷ संरक्षक ✷

डॉ. श्री महेन्द्र कुमार चौधरी

(प्रधानाचार्य)

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, कोटा

✷ मार्ग दर्शक ✷

श्री रणवीर सिंह

उप प्रधानाचार्य डाइट, कोटा

✷ प्रस्तोता एवं मुख्य सम्पादक ✷

सुश्री गिरिराज किशोरी दाधीच
(वरिष्ठ व्याख्याता)
आई.एफ.आई.सी. प्रभाग, डाइट, कोटा

सुश्री शोभा सक्सेना
(से.नि. वरिष्ठ व्याख्याता)
आई.एफ.आई.सी. प्रभाग, डाइट, कोटा

श्री राजेन्द्र पाल सिंह
(व्याख्याता) डाइट, कोटा

✷ सम्पादक मण्डल एवं प्रकाशन सहयोग ✷

श्री ज्ञान प्रकाश आर्य
(व्याख्याता) रा.उ.मा.विद्यालय.
सालेड़ा खुर्द, खैराबाद

श्री सत्यनारायण शर्मा
सेवा निवृत प्रधानाचार्य

श्रीमती प्रमिला आर्य
सेवानिवृत व्याख्याता

श्री श्याम सुन्दर शर्मा
अध्यापक (रा.उ.प्रा.वि. फाबा)

श्रीमती हंसा सक्सेना
पुस्तकालयाध्यक्ष, डाइट कोटा

श्री दिनेश शर्मा
सहायक प्रशासनिक अधिकारी,
डाइट कोटा

श्री कैलाश चन्द कांसोटिया
लेखाकार डाइट, कोटा

श्री साजिद मोहम्मद
कनिष्ठ लिपिक आई.एफ.आई.सी. प्रभाग

सम्पादकीय ....

पतित पावन सलिला माँ चर्मण्यवती के उत्स में अवस्थित महाराणा प्रताप, पन्नाधाय, मीरा एवं शूरवीरों की वसुन्धरा पर स्थित हाड़ौती के हृदय, कण्व ऋषि की तपोस्थली एवं कोट्या भील के नाम से विख्यात औद्योगिक, शैक्षणिक, तकनीकी नगरी, कोटा विद्युत जल एवं कच्चे माल के विपुल अथाह भण्डार अपने गर्भ में समेटे, आतिथ्य सेवा के लिए प्रसिद्ध है। यह नगरी हाड़ौती की प्रसिद्ध विविधताओ, कानन उपवन, भाषा वेशभूषा, प्राकृतिक और वैज्ञानिक सम्पदाओं, उद्योग शिक्षा, ऐतिहासिक और धार्मिक स्मारकों, पारस्परिक सौहार्द्र एवं सद्भावनाओं का अपूर्व केन्द्र है।

बालकों के सर्वांगीण विकास में शिक्षा के साथ–साथ सामान्यज्ञान का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सुसंस्कारित भावी पीढ़ी तैयार करने के लिए इतिहास का महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि अतीत ही वर्तमान की नींव होता है। आज के विद्यार्थी को इतिहास व भूगोल की जानकारी आवश्यक है जि[illegible] के सुनियोजित समाधान हेतु बौद्धिक स्तर को उन्नत करता है।

तजुर्बे ने एक बात सिखाई है
किसी की गलतियों को बेनकाब न कर
ईश्वर बैठा है तू हिसाब न कर
कई जीत बाकी है, कई हार बाकी है
यहाँ से चले है, नई मंजिल के लिए
यह एक पन्ना था, अभी तो पूरी किताब बाकी है।

सुश्री गिरिराज किशोरी दाधीच
(वरिष्ठ व्याख्याता)
डाइट कोटा

संदेश.....

अत्यंत हर्ष का विषय है कि जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान कोटा के आई.एफ. आई.सी. प्रभाग द्वारा अर्द्धवार्षिक पत्रिका "हाड़ौती गौरव" 2015–16 का प्रकाशन किया जा रहा है। इस पत्रिका के माध्यम से शिक्षक एवं विद्यार्थी हाड़ौती के विभिन्न आयामों यथा हाड़ौती का इतिहास, संस्कृति, भौगोलिक स्वरूप, त्यौहार, उत्सव, उद्योग एवं पर्यटक स्थल से परिचित हो सकेंगे। इस पत्रिका का प्रचार प्रसार विद्यालयों एवं जन सामान्य के लिए उपयोगी एवं सार्थक सिद्ध होगा।

मैं इस पत्रिका "हाड़ौती गौरव" 2015–16 के सफल प्रकाशन के लिए आई.एफ. आई.सी. प्रभाग एवं समस्त प्रभाग के स

श्री रणवीर सिंह चौधरी
उपप्रधानाचार्य
जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, कोटा

हाड़ौती राजस्थान के दक्षिण पूर्वी भाग में फैला हुआ है। इस क्षेत्र की विषम भौगोलिक परिस्थितियों को देखते हुए शिक्षा के क्षेत्र में बहुत कुछ आयाम को छू चुका है और बहुत कुछ किया जाना शेष है।

अज्ञानता अंधकार है जो इंसान को इंसान बनने की समझ से वंचित करता है। जीवन में सफलता प्राप्त करने की कुंजी है शिक्षा, जो जीवन को आलोकित कर देती है।

प्रस्तुत अर्द्धवार्षिक पत्रिका 2015–2016 ''हाड़ौती गौरव'' के माध्यम से ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक, धार्मिक विरासत को संजोए रखने के लिए जागृति लाने का प्रयास किया गया है। हाड़ौती के पठार, नदियाँ, पर्यटन स्थल, औद्योगिक क्षेत्रों की जानकारी इसके माध्यम से सहायक सिद्ध हो सकेगी। इसमें प्रकाशित सभी रचनाएँ प्रशंसनीय है। शिक्षा से जुड़े सभी शिक्षकों, विद्यार्थियों, विद्वज्जनों में शैक्षिक चेतना का नव संचार करने में सहायक सिद्ध होंगे।

दो शब्द...

इस पत्रिका के प्रकाशन में आई.एफ.आई.सी. प्रभाग के प्रभागाध्यक्ष व प्रभारी द्वारा रचनाओं के अनुसीमन एवं निर्माण में काफी परिश्रम किया है, वे बधाई के पात्र हैं।

डॉ. महेन्द्र कुमार चौधरी
प्रधानाचार्य
जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, कोटा

हाड़ौती के इतिहास की झलक

इतिहास के जिस भू भाग पर हाड़ा (चौहान) क्षत्रियों का शासन रहा उस सम्पूर्ण क्षेत्र को हाड़ौती कहा जाता है। वर्तमान में बून्दी, कोटा, बारां तथा झालावाड़ जिलों के भूभाग हाड़ौती कहलाते हैं।

हाड़ा नरेश पूर्वकाल में चित्तौड़ के मातहत जागीरदार थे। 1302 ई. में चित्तौड़ के रावल रतनसिंह का अलाउद्दीन खिलजी के द्वारा पतन के पश्चात् बंबावदा के देवा हाड़ा ने अपनी शक्ति से 1342 ई. में बून्दी को उसरा गौत्र के मीणों से विजित करके स्वतन्त्र बून्दी राज्य की स्थापना की। देवा हाड़ा ने शीघ्र ही बूंदी का राज्य अपने छोटे पुत्र समर सिंह को दे कर वानप्रस्थ ले लिया। समर सिंह के छोटे पुत्र जैत्रसिंह ने ही चम्बल के दायें किनारे पर स्थित कोटिया भील को मारकर 1363 ई. में कोटा पर अधिकार किया। जैत्र सिंह के वंशज सुरजन धीरदेव खंदल तथा भोनंगसी कोटा के शासक बने रहे, किन्तु बून्दी के जागीर दार के रूप में धीर देव ने ही कोटा तथा निकटस्थ पठारी क्षेत्र में बारह तालाब बनवाये।

हाड़ाओं ने अपने आत्मसम्मान तथा राष्ट्र गौरव को उन्नत रखने के लिए समय-समय पर बलिदान दिये है। चित्तौड़ के राणा लाखा [illegible] अन्न, जल त्याग करने की प्रतिज्ञा की थी। त[illegible] वे मैदानी भाग में बून्दी का कल्पित दुर्ग बना कर उसे ही विजित करने की योजना बनाई गई। बंबावदा के देवा हाड़ा के प्रपौत्र कुम्भा हाड़ा को जब वस्तु स्थिति ज्ञात हुई तो कुम्भा अपनी सैनिक टुकड़ी सहित बून्दी के कल्पित दुर्ग की रक्षा करते हुए अपना बलिदान दे दिया। बून्दी राजवंश की ही बाला सहल कंवर ने अपने नव विवाहित पति, सलुम्बर के रतन सिंह चूँड़ावत को अपने ही हाथों से अपना शीश काट कर दे दिया, क्योंकि चूँड़ावत सरदार हाडी रानी के मोहपाश के कारण औरंगजेब की सेना के विरूद्ध युद्ध में जाने से कतरा रहा था। सोलह वर्ष की हाडी रानी का बलिदान विश्व में अतुल्य है।

हाड़ा नरेश कालान्तर में दिल्ली या मुगलों के अधीनस्थ शासक रहे किन्तु अति सम्मान के साथ। सन् 1561 ई. में आमेर के भगवन्तदास तथा मानसिंह के मध्यस्थता के कारण बून्दी के महाराव सुर्जन हाड़ा ने रणथम्भौर दुर्ग, अकबर को दिया किन्तु दस सम्मान जनक शर्तो (कोल) के साथ। इन शर्तो में प्रमुख शर्त थी कि हाड़ा वंश की बेटियों का डोला (विवाह) मुगलों के लिये दिल्ली या आगरा नहीं जायेगा। इस शर्त का पालन सम्पूर्ण इतिहास काल में किया गया।

बून्दी नरेशों ने मुगल सम्राटों के लिए सम्पूर्ण देश में अपने जौहर दिखाये किन्तु एक अन्य शर्त के अनुसार अटक (सिन्धू) नदी के पार नहीं गये। सम्राट अकबर के दरबार में रावराजा सुर्जन व भोज, जहाँगीर के समय राव रतनसिंह तथा शाहजहाँ के समय शत्रुशाल सिंह पराक्रमी नरेश थे।

स्वतन्त्र कोटा राज्य का उद्भव

सागर फुट्या जल बह्या, का करे जतन।
जातो गढ़ जहाँगीर को, रोक्यो राव रतन।।

य पंक्तियाँ (उपर्यक्त पंक्तियाँ) जहाँगीर के समय की है जब अपने तीसरे पुत्र शहजादा खुर्रम (बाद में शाहजहाँ) के खुले विद्रोह तथा अपनी प्रिय बेगम नूरजँहा के प्रशासन में दखल के कारण, सम्राट जहाँगीर की स्थिति अत्यन्त कमज़ोर हो गई थी। बून्दी के पराक्रमी नरेश रतन सिंह तथा इनके दूसरे पुत्र माधोसिंह को बहादुरी रण कौशल तथा दूरदर्शिता के कारण ही जहाँगीर ने बुरहानपुर के निर्णायक युद्ध में विजय प्राप्त करके शहजादा खुर्रम को बन्दी बनाया था। इसी के परिणामस्वरूप माधोसिंह को सन् 1627 ई. में कोटा का महाराव नियुक्त करके बून्दी राज्य को दो भागों में विभक्त कर दिया। सन् 1628 ई. में जहाँगीर की मृत्यु के उपरान्त खुर्रम शाहजहाँ के नाम से उत्तराधिकारी हुआ। शाहजहाँ बुरहानपुर के किले में बन्दी अवस्था में माधोसिंह की निगरानी में था। माधोसिंह के व्यवहार, वीरता, स्वामी भक्ति तथा राज नैतिक चातुर्य से प्रभावित होकर शाहजहाँ ने भी कोटा की स्वतन्त्रता का अनुमोदन कर दिया।

इस प्रकार हाड़ा शासकों की दो समान्तर शाखाएँ बून्दी व कोटा हो गई। सन् 1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकारी का युद्ध आगरा के पास जाजव में हुआ। बून्दी शासक बुद्धसिंह मुअज्जम के पक्ष में तथा कोटा के शासक रामसिंह छोटे पुत्र आजम के पक्ष में लड़े। युद्ध में आजम इसका पुत्र बेदारबख्त तथा रामसिंह मारे गये। रामसिंह के पुत्र महाराव भीम सिंह ने पिता की मृत्यु का बदला बून्दी से लिया। बादशाह फर्रूखशियर के समय सैयद भाइयों से तथा जयपुर के सवाई जयसिंह से निकटता बढ़ा कर बून्दी के बुद्ध सिंह को अपदस्थ कर दिया। बून्दी पर जयपुर का अधिकार हो गया। भीमसिंह को सात हजार जमात की मनसबदारी दी गई थी। जो हाड़ा नरेशों में सर्वाधिक थी। कालान्तर में कोटा के महाराव दुर्जन शाल के प्रयत्नों एवं होल्कर के सहयोग से बुद्धसिंह के पुत्र उम्मेद सिंह के हाथों में आई।

झालावाड़ का युद्ध (1761 ई. में.) :- मुगल सत्ता कमजोर होने के साथ ही रणथम्भौर जयपुर नरेश माधोसिंह प्रथम को प्राप्त हो गया। माधोसिंह रणथम्भौर के बहाने बून्दी, कोटा तथा निकटस्थ कोटरियों (इन्द्रगढ़, खातौली, गैंता, बलवन) आदि पर आधिपत्य चाहता था। ये सभी कोटरिया बून्दी राजवंश से निकली थी। कोटरियों के शासकों ने महाराव शत्रुशाल प्रथम (कोटा) से सुरक्षा व सैनिक सन्धि कर ली। सन् 1761 ई. में सवाई माधोसिंह उनियारा, लाखेरी तथा पालीघाट से हो कर भटवाड़ा (मांगरोल के पास) तक आ गया। इक्कीस वर्षीय झाला जालिम सिंह के नेतृत्व में कोटा की सेना भी युद्ध मैदान में आ डटी। बून्दी तथा होल्कर की सेनायें तटस्थ रही। युद्ध में जयपुर की सेनायें बुरी तरह पराजित हुई तथा अपने नगाड़े व पताका भी छोड़ कर भाग गई।

जंग भटवाड़ा जीत, तारा जालिम झाला।
रिंग एक रंग जीत, चड़ियों रंग पच रंग के।
भटवाड़ा का चौक म जीत्यो जालम सिंह।

विजय के पुरस्कार स्वरूप झाला जालिम सिंह को कोटा राज्य का प्रधान मंत्री बनाया गया। कालान्तर में महाराव गुमानसिंह, उम्मे[illegible] **झालावाड़ राज्य का उद्भव** [illegible]तीय के समय में झालाओं के अधिकार उत्तरोत्तर बढ़ते गये। [illegible] तथा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था झालाओं के अधिकार में आ गई। लिखित संधि द्वारा अंग्रेज भी झाला के पक्ष में हो गये। महाराव किशोर सिंह द्वितीय, गढ़ में कैद हो गये। 1-10-1821को किशोर सिंह एवं झाला माधोसिंह के मध्य मांगरोल में बाणगंगा के तट पर युद्ध हुआ जिसमें किशोर सिंह की अपमान जनक हार हुई तथा इसका भाई पृथ्वी सिंह मारा गया।

अपमानित तथा हताश किशोर सिंह ने अंग्रेजों (कर्नल जैम्स टॉड) के कहने पर झाला माधोसिंह को कोटा का विभाजन करके स्वतन्त्र झालावाड़ राज्य दिया। इस प्रकार 8 अप्रैल 1838 ई. में राज राणा मदन सिंह स्वतन्त्र झालावाड़ राज्य के शासक बने।

संकलनकर्ता एवं लेखक :
सत्यनारायण शर्मा
(सेवानिवृत प्रधानाचार्य)
8-डी-13, महावीर नगर तृतीय, कोटा

हाड़ौती :– भौगोलिक स्वरुप

राजस्थान का दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र एक सुनिश्चित भौगोलिक इकाई है, जिसे "हाड़ौती का पठार" के नाम से जाना जाता है। इसके अन्तर्गत चार जिले कोटा, बारां, बून्दी एवं झालावाड़ सम्मिलित किये जाते हैं। इसका विस्तार 23°51 से 25°27 उत्तरी अक्षांश एवं 75°15 से 77°25 पूर्वी देशान्तर तक है।

भौगोलिक स्वरुप :– उच्चावच की दृष्टि से यह प्रदेश मालवा के पठार का उत्तरी भाग है। मूलरूप से यहाँ का धरातल पठारी है, इसी कारण इसको हाड़ौती का पठार नाम दिया गया है। इस प्रदेश में अत्याधिक धरातलीय विविधता है, जिनके कारण इसे निम्नलिखित धरातलीय प्रदेशों में विभक्त किया जाता है।

1. अर्द्ध चन्द्राकार पर्वत श्रेणियाँ :

हाड़ौती के पठार पर अर्द्ध चन्द्राकार रूप में पर्वत श्रेणियों का विस्तार है जो क्रमशः बून्दी एवं मुकन्दरा श्रेणियों के नाम से जानी जाती है। काली सिंध नदी गागरोन नामक स्थान से इन श्रेणियों के मध्य से अपना मार्ग बनाती है और यहीं इसमें आहू नदी आकर मिलती है। कोटा झालावाड़ मार्ग इन्हीं श्रेणियों के मध्य वक्राकार रूप में गुजरता है।

2. नदी निर्मित मैदान :

बूंदी और मुकन्दरा पर्वत श्रेणियों से आवृत लगभग 7,885 वर्ग किमी. का क्षेत्र चम्बल और उसकी सहायक नदियों द्वारा निर्मित मैदानी प्रदेश है। चम्बल की प्रमुख सहायक नदियाँ काली सिंध, पार्वती, मेज और उनकी उप–सहायक नदियों से यह क्षेत्र प्रमुख कृषि क्षेत्र में बदल गया है। चम्बल नदी के किनारे बीहड़ भी विकसित हुए हैं, किन्तु उनका स्वरूप विकट नहीं है तथा विस्तार अति सीमित है, क्योंकि यहां नदी ने अपना प्रवाह प्रसार खण्डों से होकर बनाया है।

3. शाहबाद का उच्च क्षेत्र :

हाड़ौती पठार का पूर्ववर्तीक्षेत्र अपेक्षाकृत उच्च है, जिसे शाहबाद उच्च क्षेत्र कहा जा सकता है। यह क्षेत्र 300 मीटर की समोच्च रेखा से आवृत है और पश्चिम की और 50 मीटर तक पहुँच जाता है। इसका सर्वोच्च क्षेत्र कस्बाथाना में समुद्रतट से 456 मीटर ऊँचा है। इस क्षेत्र में एक विशिष्ट भू आकृति रामगढ़ ग्राम के निकट घोड़े की नाल की आकृति (Horse Shoe Type) पर्वत श्रेणी है, जो समतल क्षेत्र में एकाएक बनी हुई है।

4. झालावाड़ का पठार :

मुकन्दरा श्रेणियों के दक्षिण में लगभग 6183 वर्ग किमी. का क्षेत्र 300 से 450 मीटर की ऊँचाई वाला पठारी भाग है। यह भाग मालवा के पठार का अभिन्न अंग है और दक्षिण के पठार से समानता रखता है अर्थात् यहाँ काली मिट्टी की प्रधानता है। इस पठारी क्षेत्र में कहीं–कहीं एकाकी पर्वत श्रेणी भी दृष्टिगत हो जाती है। विशेषकर मनोहरथाना, अकलेरा और बकानी क्षेत्र में। शेष प्रदेश समरूप पठार है, जिस पर छोटी–छोटी नदियों ने अपनी घाटियाँ बना रखी है।

5. डग– गंगधार उच्च प्रदेश :

हाड़ौती पठार का दक्षिण पश्चिम भाग डग गंगधार एवं उच्च क्षेत्र 1429 वर्ग किमी. का क्षेत्र है, जो 450 मीटर की ऊँचाई वाला है। यहाँ अनेक छोटी–छोटी पहाड़ियाँ भी एकाकी रूप में यत्र–तत्र विस्तृत है। इसकी पश्चिमी सीमा चम्बल नदी बनाती है। उच्च क्षेत्र होने के उपरान्त भी यह क्षेत्र एक कृषि क्षेत्र है, क्योंकि इसमें धरातलीय विविधता बहुत कम है।

जलवायु :– सम्पूर्ण भारत के समान इस प्रदेश की जलवायु भी मानसून द्वारा नियन्त्रित उष्ण है। इसकी प्रमुख विशेषता ऋतुओं के अनुसार तापमान, हवाएँ आदि की परिवर्तन शीलता है। यहाँ भी नवम्बर से फरवरी तक शीतकाल, मार्च से मध्य जून तक ग्रीष्म काल एवं मध्य जून से अक्टूबर तक वर्षाकाल होता है। ग्रीष्मकाल में तापमान उच्च होकर 38^0 से.ग्रे. तथा कभी–कभी 42^0 से.ग्रे. तक हो जाता है। गर्म, तेज, धूलभरी हवाएँ चलती है। मध्य जून के पश्चात या जुलाई के प्रथम सप्ताह में यहां मानसून पहुँच जाता है। यहाँ की औसत वार्षिक वर्षा 95 से.मी. है। यहां भी झालावाड़ जिला और उत्तरी पश्चिमी बून्दी जिला अधिक वर्षावाला है जहां 85 से.मी. से अधिक वर्षा होती है। मध्य पश्चिमी भाग में 60 से.मी. से 85 से.मी. तथा शेष भाग में 60 से.मी. से कम वर्षा होती है। सामान्यतः यहाँ की जलवायु स्वास्थ्य वर्धक हैं।

प्राकृतिक वनस्पति :– प्रदेश में मूलरूप से उष्ण शुष्क पतझड़ वाले वन पाए जाते हैं। यहाँ निम्न प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति पाई जाती है।

1. धोकड़ा वन :

वनों का विस्तार हाड़ौती के विस्तृत क्षेत्रों में है। ये पर्वत श्रेणियों की ढालों पर एवं अन्य असमतल भूमि में पाए जाते हैं। इनकी वृद्धि मंद होती है। तथा पेड़ों की ऊँचाई 7.5 मीटर तक होती है। ये बून्दी की पहाड़ियों, मुकन्दरा की श्रेणियों एवं शाहबाद क्षेत्र में अधिक विस्तृत है। इसमें धोकड़े के पेड़ के अतिरिक्त तेंदू, खेर, बेल, सिरस आदि भी मिलते हैं।

2. मिश्रित वन :

पर्वत श्रेणियों की तलहटियों में और नदियों के किनारे मिलते है। इसमें विभिन्न प्रकार के वृक्ष जैसे– खेर, बेल, तेंदू, खेजड़ा, आँवला, बहेड़ा, जामुन, खिरनी, सेलार आदि मिलते है। जहाँ नमी की दशा उपयुक्त होती है, वहां बांस भी मिलता है। चन्दन के वृक्ष डग, पिड़ावा तहसील में व कनवास में मिलते है।

3. खेर के वन :–

खेर के वन भी मिश्रित अवस्था में पर्वतीय ढालों, एवं मैदानी भागों में मिलते हैं। ये वन पिड़ावा, बकानी (झालावाड़) तथा सांगोद (कोटा), बारां, शाहबाद (बारां) नैनवा, हिण्डौली (बून्दी) में विशेषकर मिलते हैं। घास के बीड (सघन क्षेत्र) हाड़ौती में अनेक स्थानों पर देखे जा सकते हैं जहाँ प्राकृतिक रूप से घास एवं झाड़ियाँ उग आती हैं।

आर्थिक प्रारुप :–

कृषि, उपजाऊ मिट्टी, पर्याप्त वर्षा एवं अनेक क्षेत्रों में विकसित सिंचाई सुविधाओं के फलस्वरूप हाड़ौती प्रदेश राज्य का एक प्रमुख कृषि क्षेत्र बन गया है। यहाँ रबी और खरीफ दोनों ही फसलों का समान रूप से उत्पादन होता है। रबी में गेहूँ, जौ, सरसों, और चना उत्पादित होता है, जबकि खरीफ में सोयाबीन, ज्वार, तिल, मक्का, मूंगफली, गन्ना, कपास एवं तम्बाकू आदि फसलें होती हैं। मूंगफली के उत्पादन में यह प्रदेश राज्य में अग्रणी है। काली मिट्टी के प्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन में वृद्धि हो रही है।

सिंचाई :–

सिंचाई सुविधाओं का यहाँ पर्याप्त विकास हुआ है। नहरें, तालाब, कुओं, नलकूपों के माध्यम से पर्याप्त विकास हुआ है। नहरें, तालाब, कुओं, नलकूपों के माध्यम से पर्याप्त क्षेत्रों में सिंचाई होती है। चम्बल योजना के अन्तर्गत बने बाँध जैसे गांधी सागर, राणा प्रताप सागर, जवाहर सागर, कोटा बैराज से निकली नहरों से कोटा और बून्दी जिलों में सिंचाई होती है।

खनिज :–

खनिज उत्पादन की दृष्टि से हाड़ौती महत्वपूर्ण नहीं है। धात्विक खनिजों का यहाँ लगभग अभाव है। झालावाड़ और बून्दी के कुछ भागों में ताँबा और लोहा होने के प्रमाण हैं, किन्तु व्यापारिक दृष्टि से यह उपयोगी नहीं है। यहां का वास्तविक खनिज इमारती पत्थर है। धिया पत्थर तालेड़ा, सुकेत, झालरापाटन, लाडपुरा, खानपुर और भवानीमण्डी क्षेत्र में मिलता है। स्लेट पत्थर कोटा जिले में पर्याप्त है, तथा इस पर पालिश होने पर यह चिकना और चमकदार हो जाता है। यह कोटा स्टोन के नाम से जाना जाता है।

इसके प्रमुख केन्द्र रामगंजमण्डी, मोड़क, सुकेत, दरा एवं कोटा है। चूना भी अनेक क्षेत्रों में मिलता है, बून्दी का लाखेरी क्षेत्र चूना उत्पादन में महत्व रखता है। ग्लास सैण्ड, डोलामाइट भी यहाँ उपलब्ध है। सड़कों के निर्माण में उपयोग में आने वाला पत्थर (गिट्टी) यहां बहुतायत से है।

उद्योग :–

ऊर्जा एवं जल की उपलब्धता ने इस प्रदेश के औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कोटा का औद्योगिक क्षेत्र न केवल हाड़ौती अपितु राजस्थान का सर्वाधिक महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र है जिसका भारतीय उद्योग के मानचित्र पर भी महत्व है। कोटा में विकसित उद्योग में सरकारी क्षेत्र के इन्स्ट्रूमेण्टेशन लिमिटेड की स्थापना 1968 में की गई। विदेशी सहयोग से विकसित इस उद्योग में सूक्ष्म यंत्र, ताप नियंत्रक संयत्र, विद्युत चुम्बकीय उपकरण आदि का निर्माण होता है। अन्य उद्योगों में श्रीराम रेयन्स, श्रीराम फर्टीलाइजर रसायन, कपास, कृषि यंत्र, तेल मिल, विद्युत यंत्र आदि उद्योगों का भी विकास हुआ है। बून्दी में लाखेरी स्थित सीमेन्ट कारखाना सबसे पुराना है। इसकी स्थापना 1905 में की गई और एसीसी कम्पनी द्वारा आज भी परिचालित है। मोड़क में मंगलम सीमेन्ट प्लांट है। पत्थर पॉलिशिंग उद्योग मोड़क, रामगंजमण्डी, सुकेत, मण्डाना, दरा आदि में हैं। इस प्रदेश के कुटीर उद्योग में 'कोटा डोरिया' की साड़ियाँ प्रसिद्ध है।

इस तरह हाड़ौती का पठार राजस्थान का एक विशेष भौगोलिक एवं आर्थिक प्रदेश तो है ही, साथ ही ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह सांस्कृतिक सूत्र में बंधा हुआ है। जल की उपलब्धि, ऊर्जा की सुलभता, परिवहन की उत्तम सुविधा तथा मानव संसाधन के सामंजस्य से यह प्रदेश प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

शोभा सक्सेना
(से.नि. वरिष्ठ व्याख्याता)
प्रभागाध्यक्ष आई.एफ.आई.सी.
डाइट कोटा

ढ़ाका की मलमल का विकल्प माना जाने वाला कोटा डोरिया, सत्रहवीं सदी में महाराव किशोर सिंह द्वारा मैसूर से लाए गए कारीगरों के माध्यम से आरम्भ हुआ, रियासतकाल में मैसूर के कारीगरों द्वारा राजा महाराजाओं की पोशाक के लिए मसूरिया का उपयोग किया जाता था। मैसूर की रेशमी साड़ियाँ कोटा डोरिया साड़ी के नाम से मशहूर हुई। देश–विदेश में भी कोटा साड़ी का फेब्रिक ड्रेस डिजाइनर्स की खासी पंसद बन गया है। हाड़ौती में कैथून के अलावा मांगरोल, अंता, सीसवाली, कोटसुआ, सांगोद, रोटेदा, मंडाना, केशोरायपाटन, कापरेन एवं बून्दी, में भी हमारे बुनकर परिवार इस हस्तकरधा उद्योग से अपना जीवन यापन कर रहे हैं।

ऐसा माना जाता है कि आली जान हाली बुनकर ने सबसे पहले अपना रेजा लगाया, बुनकरों द्वारा पगड़ियों के लिए कपड़ा बनाना शुरू किया। बाद में इन्हीं बनुकरों ने साड़ियाँ बुनने का कार्य भी प्रारम्भ किया। इस कपड़े की बुनाई दो या अधिक डोरों (धागों) को साथ मिलाकर छोटे–छोटे चौकोर आकृतिनुमा डिजायन के रूप में विकसित की। आजादी के युद्ध के समय इन्हीं करघों पर खादी बुनने का काम किया जाता था। 200 खत की मोटी खादी और 300 एवं 400 खत की पतली खादी बनती थी। कोटा डोरिया की साड़ी आजादी के पश्चात् बनाना आरम्भ हुई। शुरूआत में सूती साड़ियाँ बनती थी, परन्तु समय के साथ और बाजार में मांग के अनुसार आज रेशम, सोना, **कोटा की शान कोटा डोरिया उद्योग** बनायी जा रही हैं। इन साडियों की अच्छी कीमत भी कारीगरों को मिल रही है।

डोरिया, जरी एवं मसूरिया साड़ियों के लिए सूत मुम्बई, नवसारी, कोयम्बटूर से मंगवाया जाता है। वहीं रेशम, चीन, कोरिया, बैंगलोर से आता है।

सर्वप्रथम सूत की धुलाई की जाती है, फिर ताना–बाना तैयार कर साड़ियाँ बुनी जाती हैं एवं साड़ियों में विभिन्न डिजायनों के साथ नवीन प्रयोग कर फैशनानुसार खूबसूरत साड़ियाँ तैयार की जाती हैं। छपाई के लिए साड़ियाँ मुम्बई, फरूखाबाद, मथुरा भी भिजवाई जाती हैं। आजकल साड़ियाँ मय ब्लाउज तैयार की जाती हैं। एक सूती साड़ी बनाने में 2 से 3 दिन का समय लग जाता है। इस उद्योग में महिलाऐं भी पुरूषों के साथ सहयोग कर रही हैं। इस कारण बुनकरों का जीवन स्तर पहले से अधिक बेहतर हुआ है।

कोटा साड़ी की अधिक माँग होने के कारण नकली डोरिया साड़ी भी मुम्बई में बनने लगी है, जो कि मशीनों से बनायी जाती है। हाथ से बने डोरिया के चौखानों की कसावट धुलाई के बाद भी बरकरार रहती है।

डॉ. मोहन लाल यादव
(पूर्व प्रबंध निदेशक)
राजस्थान हथकरधा विकास निगम, जयपुर
सचिव नगर विकास न्यास, कोटा

रण वीरों की धरती है

रण वीरों की धरती है ये, मेरा प्यारा राजस्थान
इसके साहस और शौर्य की, हल्दीघाटी गाये गान,
ऊँचे–ऊँचे पर्वत पर हैं, ऊँचे–ऊँचे दुर्ग विशाल
कला ज्ञान साहित्य सभी में, रहा समुन्नत इसका भाल।

राणा को प्यारे लगते थे, बरछी भाले औ, तलवार
भूखा प्यासा वन–वन भटका, उस मानी का था परिवार,
नहीं झुकाया शीश कभी भी, प्यारा जिसको स्वाभिमान
ऐसे प्रबल प्रतापी से है, गौरवशाली राजस्थान।

युगों–युगों तक याद रहेगा, हाड़ी रानी का बलिदान
शीश काट जब खुद सेनानी, भेजी रानी रण मैदान
धरती धूजी दिग्गज डोले, डिगा बैरी का अभिमान
टंकारों से तलवारों की, गूँजा जय–जय राजस्थान।

राजकुँवर की प्राण सुरक्षा, की थी जिसने बन कर ढाल
उदय सिंह की सेज सुलाया, जिसने अपना प्यारा लाल
कर्त्तव्यों की बलिवेदी पर, भेंट किया था चंदन बाल
चीख उठी थी माँ की ममता, पन्ना धाय हुई बेहाल।

प्रमिला आर्य
सेवानिवृत व्याख्याता
4–जे–3, तलवण्डी, कोटा

हाड़ौती के केन्द्रीय संरक्षित स्मारक

राजस्थान का दक्षिण–पूर्वी भाग, जिसके अन्तर्गत कोटा, बून्दी, झालावाड़ तथा कुछ भाग सवाई माधोपुर एवं चित्तौड़गढ़ जिलों का भी सम्मिलित है, हाड़ौती क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। चौदहवीं शताब्दी के पश्चात् इस क्षेत्र पर हाड़ा राजपूतों का शासन रहा। प्राचीन समय से ही हाड़ौती अपनी समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ स्थित अनेक किले, मन्दिर एवं महल इस क्षेत्र के गौरवशाली अतीत के परिचायक हैं। हाड़ौती में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा घोषित केन्द्रीय संरक्षित स्मारकों का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया गया है :–

जिला बारां

अटरू मन्दिर के अवशेष : प्राचीन स्थल अटरू अथवा गणेशगंज, यहाँ बिखरे वास्तु एवं शिल्प अवशेषों के लिए प्रसिद्ध है। मन्दिर अवशेषों के समूह में सबसे प्रमुख गड़गज मन्दिर के नाम से जाना जाता है जो क्षैतिज योजना में गर्भगृह, अन्तराल, अर्धमण्डप एवं मुखमण्डप युक्त है। वास्तु खण्डों का विशाल ढेर इस मन्दिर की भव्यता का साक्षी है। अटरू के मन्दिर प्रतिहार कालीन वास्तु एवं मूर्ति कला से प्रभावित हैं, जिनका निर्माण काल 10 वीं शताब्दी माना जा सकता है। अन्य मन्दिरों में पनिहारी, चनिहारी, सरदेव माता, गढ़िया तथा शिव को समर्पित फूलदेवरा, विष्णु एवं महिषासुर मर्दिनी हैं। विष्णु को समर्पित गढ़िया मन्दिर विशेष महत्व का है। प्राकार से धिरा यह मन्दिर गर्भगृह, अ[redacted] तत्कालीन समय में जैन सम्प्रदाय का भी प्रमु[redacted] के नाम से प्रसिद्ध हैं, जहाँ जैन तीर्थकंर की विशाल प्रतिमा आज भी सुरक्षित है।

यूप स्तम्भ (बड़वा) : बड़वा राजस्थान के उन चार स्थानों में से एक है जहाँ से तीसरी शताब्दी ई. के अभिलेख युक्त प्रस्तर स्तम्भ मिलते हैं जो तत्कालीन समय में वैदिक यज्ञ के साक्षी हैं बड़वा से प्राप्त स्तम्भों पर उत्कीर्ण लेख से ज्ञात होता है कि विक्रम सं. 295 (238 ई.) में फाल्गुन मास की पंचम तिथि को मौखरी नरेश महासेनापति के पुत्र वलभद्र एवं सोमदेव द्वारा यहाँ त्रिरत्न यज्ञ का आयोजन किया गया था। प्रत्येक यज्ञ की समाप्ति के बाद यूप स्तम्भ स्थापित किये जाते थे। बड़वा से प्राप्त पांच यूप स्तम्भों में से चार राजकीय संग्रहालय कोटा में स्थानान्तरित कर दिये गये हैं तथा एक स्तंभ आज भी मूल स्थान बड़वा में स्थित है।

प्राचीन अवशेष (कृष्णविलास) : जिला मुख्यालय बारां से उत्तर–पश्चिम में विलासी नदी के किनारे घने जंगल में लगभग तीन वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में अनेक मन्दिरों एवं प्राचीन किले के अवशेष बिखरे पड़े हैं। इस स्थल को प्राचीन समय में विलास के नाम से जाना जाता था। यहाँ बिखरे अनेक जैन एवं हिन्दू मन्दिरों के अवशेषों के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि कृष्णविलास 9–10वीं शताब्दी ई. में धार्मिक आस्था का प्रसिद्ध केन्द्र रहा है। हिन्दू मन्दिरों में अधिकतम विष्णु को समर्पित हैं।

मुख्य विष्णु मन्दिर, जिसे चार खम्भा के नाम से भी जाना जाता है, से विष्णु की वि.सं. 1178 (1121 ई.) की मूर्ति प्राप्त हुई है।

यह मन्दिर ऊँचें चबूतरे के मध्य में स्थित है जो शहतीर युक्त चार स्तम्भों पर आधारित है एवं चारों कोनों पर एक–एक लघु मन्दिर है जबकि एक अन्य लघु मन्दिर मुख्य मन्दिर के पीछे स्थित है। यहाँ से प्राप्त मूर्तिशिल्पों में विष्णु के विभिन्न अवतार युक्त फलक, बांसुरीयुक्त कृष्ण एवं शेषशायी विष्णु की मूर्तियाँ प्रमुख हैं। कृष्णविलास स्थित अनेक भव्य जैन मन्दिरों के अवशेषों से यह प्रमाणित होता है कि यह क्षेत्र तत्कालीन समय में जैन सम्प्रदाय का भी प्रमुख केन्द्र रहा है। जिन्द्रिताचार्य द्वारा 1218 ई. में रचित प्रशस्ति में भी इस स्थान का उल्लेख मिलता है। कहा जाता है कि जब विलास के शासक भीमशाह ने अपनी पुत्री का विवाह रणथम्भौर के गर्वनर के साथ करने से मना कर दिया तो उसने यहाँ के मन्दिरों को ध्वस्त कर दिया। इस युद्ध में भीमशाह मारा गया एवं उनकी पुत्री ने विलासी नदी में कूद कर अपनी जान दे दी। यह स्थान आज भी कन्यादेह के नाम से प्रसिद्ध है।

प्राचीन मन्दिर, मूर्तियाँ एवं अभिलेख (शेरगढ़) : परवन नदी के किनारे स्थित शेरगढ़ का वर्तमान नाम सम्भवतया सरवंश के शासक शेरशाह सूरी के मालवा अभियान के अन्तर्गत इस स्थान पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के पश्चात् पड़ा। शेरगढ़ का प्राचीन नाम कोषवर्धनी (कोष बढ़ाने वाला) था। यहाँ से प्राप्त अभिलेख के अनुसार सन् 790 ई. में शेरगढ़ पर सामन्त देवदत्त शासन करता था जिसने यहाँ बौद्ध मन्दिर एवं विहार का निर्माण करवाया। 11–12 वीं शताब्दी ई. में शेरगढ़ स्थित सोमनाथ मन्दिर मुख्य पूजास्थल के रूप में जाना जाता था। 11 वीं शताब्दी में निर्मित लक्ष्मीनारायण मन्दिर आज भी सुरक्षित है। यह मन्दिर क्षैतिज योजना में गर्भगृह, अन्तराल, मण्डप एवं मुखमण्डप युक्त है। इस मन्दिर से प्राप्त एक अभिलेख में धार के परमार शासक वाकपति से नरवर्मन तक वंशावली उत्कीर्ण है।

1208 ई. में एक अन्य अभिलेख में किसी शिव भक्त द्वारा यहाँ तालाब के निर्माण का वर्णन है। शेरगढ़ में जैन धर्म तत्कालीन समय में अपनी पराकाष्ठा पर था। झाला हवेली के पार्श्व में 12 वीं शताब्दी की तीन विशाल खड़ी जैन प्रतिमायें इस तथ्य को प्रमाणित करती हैं। देवपाल द्वारा शान्तिनाथ, कुन्थनाथ एवं अरहनाथ की मूर्तियाँ स्थापित करने का वर्णन भी मिलता है। वि.सं. 1162 (1105 ई.) के अभिलेख में यहाँ स्थित नये चैत्य में जैन तीर्थकंर नेमिनाथ से सम्बन्धित भव्य आयोजन का विवरण मिलता है।

जिला बून्दी

महल स्थित हाड़ौती स्कूल की चित्रकला : हाड़ौती क्षेत्र में स्थित बूंदी अपने भित्ति चित्रों के लिए विश्व प्रसिद्ध है। पहाड़ी स्थित छत्तरमहल एवं उम्मेदमहल में पहुँचने हेतु दो द्वार हैं, जहाँ तक ढलान युक्त रास्ते से पहुँचा जा सकता है। इनमें 18–19 वीं शताब्दी ई. में सुन्दर एवं आकर्षक भित्ति चित्रों को नीले एवं हरे रंग से उकेरा गया है। इनमें धार्मिक विषयों के अतिरिक्त संगीत, शिकार एवं शासकीय शोभायात्राओं से सम्बन्धित विषय भी सम्मिलित हैं।

प्राचीन टीला (केशवराय पाटन) : कोटा शहर से लगभग 15 किमी. उत्तर पश्चिम में चम्बल नदी के किनारे स्थित केशवराय पाटन, जिसका प्राचीन नाम आश्रम नगर, आश्रम पक्कन या पाटन था, का प्राचीन इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यहाँ स्थित विशाल टीलों का एक बहुत बड़ा भाग, जो चम्बल के बहाव से नष्ट हो चुका है, इस स्थान की महत्ता को दर्शाता है। यह स्थान मथुरा से उज्जैन जाने वाले प्राचीन व्यापारिक मार्ग पर स्थित है। इस प्राचीन टीले का एक बहुत बड़ा भाग आज भी आबाद है। यहाँ स्थित केशवराय जी का मन्दिर जिसके कारण इस स्थान का नाम केशवराय पाटन पड़ा, आज भी इस स्थान के अतीत का साक्षी है।

जिला झालावाड़

बौद्ध गुफाऐं एवं स्तम्भ (विनायगा) : विनायगा गाँव के उत्तर में लेटेराइट पहाड़ी पर पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर बौद्ध गुफाऐं खोदी गई हैं जिनमें सामान्यतः विहार के साथ ही स्तूप भी निर्मित हैं। यहाँ का मुख्य आकर्षण स्तूपाकार विहार है जिसके ऊपरी भाग में परम्परागत चैत्यगृह एवं चैत्य गवाक्ष बनाये गये हैं। एक अन्य गुफा, जिसमें दो ओर से कक्षों की कतार तथा बीच में खुला आंगन है, के पीछे एक बन्द गलियारा है जिसकी छत मेहराबयुक्त है तथा बीच के दरवाजे के दोनों ओर एक–एक कक्ष निर्मित है। इन सभी गुफाओं की छत सपाट है तथा एक गुफा दो मंजिली है।

निरंजनी गुफा : यह गुफा डग कस्बे के दक्षिण में निरंजनी शिव मठ के समीप स्थित है। यह एक छोटा कक्ष है जिसकी माप **3.50x3.50** मी. है तथा उत्तरी दिशा में प्रवेश द्वार है। गुफा का अन्दरूनी भाग अलंकरण विहीन है, जिसकी सपाट छत दो खम्बों पर आधारित है। शैलीगत विशेषताओं के आधार पर इस गुफा का कालक्रम लगभग 9वीं–10वीं शताब्दी ई. के लगभग रखा जा सकता है।

बौद्ध गुफाएँ (हथियागोड़) : पचपहाड़ से विनायगा जाते हुये पगाड़िया गाँव के 3 किमी. दक्षिण में हाथीगोड़ की पहाड़ी के नाम से प्रसिद्ध पहाड़ी पर बौद्ध धर्म से सम्बन्धित पाँच गुफाएँ स्थित है। इनमें एक गुफा की छत मेहराबयुक्त है तथा कुछ दूरी पर चौकोर चबूतरे पर स्तूप निर्मित हैं। ये गुफाएँ 7–8वीं शताब्दी में बौद्ध भिक्षुओं के निवास एवं पूजा हेतु बनावई गयी थीं।

बौद्ध गुफाऐं, स्तम्भ एवं मूर्तियाँ (कोल्वी) : कैसरा गाँव के पश्चिम में स्थित कोल्वी गांव के दक्षिण–पश्चिम में पहाड़ी पर लेटेराइट चट्टान को काटकर बनायी गयी लगभग 50 गुफाएँ बौद्ध संप्रदाय से सम्बधित हैं, जो पहाड़ी के दक्षिण–पश्चिम एवं पूर्वी दिशा में स्थित हैं।

वातावरण के प्रभाव से इन गुफाओं को काफी क्षति पहुँची है। गुफाओं के अलावा यहाँ चट्टान को काटकर स्तूप भी बनाये गये हैं जो अपने आकार प्रकार में विशिष्ट है। स्तूप योजना में वर्गाकार चबूतरे के दोनों किनारों पर मोल्डिंग है तथा ऊपर बेलनाकार भाग है। इसकी चारों दिशाओं में चैत्य गवाक्षों में बुद्ध की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। इसका ऊपरी भाग हीनयान शाखा से प्रभावित दिखता हैं। इस समूह में मात्र एक चैत्यगृह है, जिसके अन्दरूनी भाग में स्तूप हैं तथा ध्यान मुद्रा में बुद्ध की मूर्ति उकेरी गयी है। इसके साथ ही सभामण्डप के चैत्य गवाक्ष में एक अन्य ध्यान मुद्रा में बुद्ध की मूर्ति भी स्थापित है। उत्तर एवं पूर्वी भाग में स्थित अधिकतर गुफाओं की समय के प्रवाह से काफी क्षति हुई है।

प्राचीन अवशेष (दुधलिया) : सुरक्षा दीवार से घिरे प्राचीन अवशेष पहाड़ी के ऊपर स्थित है, जिनके निर्माण में मुख्यतः लेटेराइट पत्थर का प्रयोग किया गया है। 2 मी. चौड़ी सुरक्षा दीवार में पूर्व की ओर से प्रवेश हेतु एक छोटा दरवाजा है। सुरक्षा दीवार के साथ–साथ 3 गुना 3 मी. चौड़ा कक्ष निर्मित है तथा बाहरी भाग में एक बावड़ी बनी हुई है।

प्राचीन मन्दिर चन्द्रभागा (झालरापाटन) : राजस्थान के प्राचीन मन्दिरों में एक झालरापाटन स्थित शीतलेश्वर महादेव मन्दिर का निर्माण वि. स. 746 (689 ई.) में देव के भाई वापक द्वारा करवाया गया। क्षैतिज योजना में यह मन्दिर गर्भगृह, अन्तराल एवं मण्डप युक्त है, जो 26 अलंकृत प्रस्तर–स्तम्भों पर आधारित है।

प्राचीन मन्दिर सूर्य मन्दिर (झालरापाटन) नगर के मध्य स्थित सूर्य मन्दिर जो कोर्णाक के सूर्य मन्दिर के बाद दूसरे स्थान पर माना जाता है।

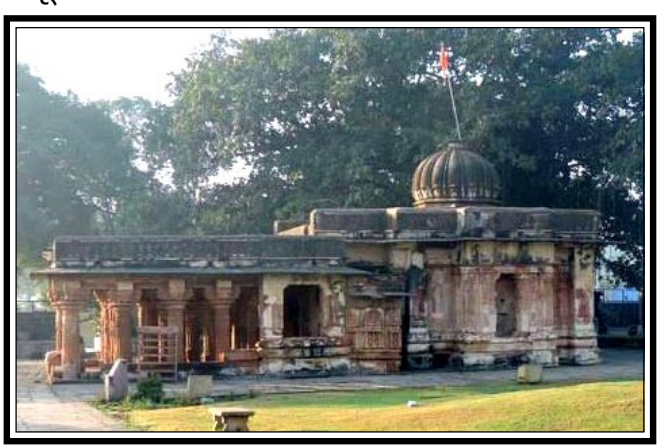

सभामण्डप की छत को मूर्ति पट्टों से उकेरा गया था, जिनके उत्तरी भाग में दो पट्टिकाओं के अलावा अन्य अब उपलब्ध नहीं है। मन्दिर का मूल शिखर भी अब उपलब्ध नहीं है। शिव को समर्पित इस मन्दिर के ललाटबिंब में लकुलीश का अंकलन है। यहाँ स्थित अन्य मन्दिरों में दुर्गा मन्दिर, कालिका देवी मन्दिर, महादेव (लकुलीश), विष्णु एवं वराह मन्दिर मुख्य हैं। ये गुफाऐं 7–8वीं शताब्दी में बौद्ध भिक्षुओं के निवास एवं पूजा हेतु बनाई गयी थी।

जिला कोटा

शिव मन्दिर एवं गुप्तकालीन अभिलेख (चारचौमा) : कोटा से लगभग 25 किमी. दक्षिण–पश्चिम में स्थित यह शिव मन्दिर मूल रूप में गुप्तकालीन है, जिसकी पुष्टि यहाँ से प्राप्त अभिलेखों से होती है। उन्नीसवीं शताब्दी में इस मन्दिर का पुनः जीर्णोद्धार हुआ। योजना में यह मन्दिर गर्भगृह, अन्तराल एवं सभामण्डपयुक्त है, जिसमें विशाल चतुर्मुखी शिवलिंग है। ब्राहमी लिपि में उत्कीर्ण गुप्तकालीन दो अभिलेखों में मन्दिर निर्माण की नींव रखने का प्रसंग मिलता है।

मन्दिर एवं अभिलेख (कंसुवा/कोटा) : कोटा शहर के बाहरी किनारे पर स्थित कंसुवा प्राचीनकाल में शिव उपासना का एक प्रमुख केन्द्र रहा है। यहाँ शिव की चतुर्मुख लिंग रूप में पूजा होती है। गर्भगृह के अलावा प्रांगण में भी अनेक चतुर्मुख शिवलिंग है। मन्दिर के प्रवेश द्वार की दाहिनी दीवार पर लकुलीश की मूर्ति स्थापित है, जो यहाँ शैव उपासना की महत्ता को इंगित करता है। वर्तमान मन्दिर का पुनः निर्माण संभवतया 19 वीं सदी में हुआ। पूर्वाभिमुख यह मन्दिर योजना में पंचस्थ गर्भगृह अंतराल एवं मण्डपयुक्त है। गर्भगृह के द्वारस्तम्भ भी अलंकृत है। मन्दिर के दक्षिणी भाग में शिलापट्ट पर वि.सं. 795 (738ई.) में शिवगण का अभिलेख उत्कीर्ण है।

मन्दिर, किला एवं मूर्तियाँ (दरा / मुकन्दरा) : कोटा–झालावाड़ मार्ग में एक संकरी घाटी, जिसे दरा/मुकन्दरा के नाम से जाना जाता है, में दो स्मारक स्थित हैं। एक छोटी गढ़ी, जो मध यकालीन शिकारगाह के नाम से जानी जाती है में प्रवेश हेतु दक्षिण पूर्व में विशाल मेहराबयुक्त द्वार है। यह दो मंजिल इमारत है। जिसके निचले भाग में आंगन एवं विशाल पानी का कुण्ड है तथा आवासीय भाग के पीछे एक लघु शिव मन्दिर है।

प्रवेश द्वार के समीप आंगन में बावड़ी निर्मित है। उक्त गढ़ी के निर्माण में पत्थरों के अलावा लाखेरी ईटों का प्रयोग भी हुआ है तथा चूने युक्त गारे से चिनाई की गई है। गढ़ी के समीप ही गुप्तकालीन मन्दिर, जिसे भीमचौरी के नाम से जाना जाता है, राजस्थान के मन्दिर अवशेषों से सबसे प्राचीन है। पूर्वाभिमुख इस मन्दिर में उत्तर एवं दक्षिण दिशा से प्रवेश हेतु सीढ़ियाँ निर्मित है। क्षैतिज योजना में यह मन्दिर भारी स्तम्भों से घिरा गर्भगृह, भित्तिस्तम्भ एवं मण्डपायुक्त रहा है, जिसके अब अवशेष मात्र शेष हैं। स्तम्भों का ऊपरी भाग गुप्तकालीन विशिष्ट ज्यामितीय एवं पुष्प अलंकरणों से सुजज्जित है। इनके शिथिल मूर्तियों के अलावा यहाँ गुप्तकालीन गणेश की मूर्ति एवं अलंकरण युक्त धेरे में ढोल बजाते बालक का अंकन महत्वपूर्ण है।

संकलन कर्ता – **राजेन्द्र पाल सिंह**
(व्याख्याता) डाइट कोटा

हाड़ौती के पर्यटक स्थल एवं विशिष्ट त्यौहार

चम्बल उद्यान : कोटा चम्बल नदी के तट पर दस एकड़ भूमि में स्थित यह उद्यान राजस्थान के श्रेष्ठतम उद्यानों में से एक है, जो 1976 में पूर्णतया विकसित हुआ।

हाड़ौती यातायात प्रशिक्षण पार्क : चम्बल नदी उद्यान के निकट 12 एकड़ भूमि पर निर्मित यातायात पार्क राजस्थान का प्रथम व देश के सर्वश्रेष्ठ यातायात पार्कों में से एक है। इसका निर्माण जुलाई 1992 में पूर्ण हुआ। पार्क में किशोरों एवं बालकों को यातायात के महत्वपूर्ण नियमों की जानकारी देने के लिए यातायात प्रशिक्षण दीर्घा का निर्माण किया गया है। पार्क में सड़कों पर स्थान-स्थान पर सड़क संकेत चिह्न लगाये गये है। कई भवनों यथा अस्पताल, स्कूल, डाकघर, हवाई अड्डा आदि के मॉडल भी यहाँ बनाये गये हैं।

छत्रबाग : छत्र विलास तालाब व बाग के निकट स्थित इस स्थल पर कोटा के हाड़ा शासकों का दाह संस्कार करने की परम्परा रही है। दिवंगत शासक की स्मृति में उनके पौत्र द्वारा प्रस्तरों से छतरी बनवाई जाती है। बाग में स्थित अनेक छतरियाँ राजपूत स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है। छतरियों पर पशु-पक्षी, देवी देवताओं एवं लता की कलात्मक आकृतियाँ उत्कीर्ण है।

मथुराधीश मन्दिर : यहाँ पाटनपोल में भगवान मथुराधीश का मन्दिर है, जिसके कारण यह नगर वैष्णव सम्प्रदाय का प्रमुख तीर्थ धाम है। देश में वल्लभ सम्प्रदाय के प्रमुख सात पीठों में से कोटा प्रथम पीठ है। मन्दिर में वर्ष पर्यन्त वैष्णव सम्प्रदाय की नीति–रीति के अनुसार उत्सवों का आयोजन किया जाता है, जिनमें कृष्ण जन्माष्टमी पर नन्द महोत्सव, दीपावली पर अन्नकूट उत्सव तथा होली पर आयोजित होने वाले उत्सव प्रमुख हैं।

चारचौमा का शिवालय : कोटा से 25 किलोमीटर दूर चारचौमा ग्राम के समीप प्राचीन शिव मन्दिर है जिसे गुप्तकालीन अर्थात् चौथी–पाचवीं शताब्दी का बताया जाता है। डॉ. मथुरालाल शर्मा ने चारचौमा के शिव मन्दिर को कोटा राज्य में सबसे प्राचीन देवालय बताया है। मन्दिर में स्थित चतुर्मुखी शिव प्रतिमा बहुत आकर्षक है। वेदी से चोटी तक प्रतिमा की ऊँचाई तीन फीट है। कंठ से ऊपर के ये चारों मुख काले और चमकीले है। चारों मुखों का केश विन्यास भी दर्शनीय है।

कंसुवा का शिव मन्दिर : कोटा शहर से लगभग 6 किलोमीटर दूर डी.सी.एम. मार्ग पर 8 वीं. शताब्दी का कंसुआ का शिव मन्दिर है। मन्दिर के परिक्रमा पथ में चारों और की दीवार पर कुटिला लिपि में लिखा हुआ 8 वीं शताब्दी का शिलालेख है। यह शिलालेख शिवगण मौर्य का है, जिसमें इस मन्दिर के निर्माण का विस्तार से उल्लेख किया गया है।

प्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद ने अपने चन्द्रगुप्त नाटक के प्राक्कथन में इस स्थान को कण्वाश्रम की संज्ञा देकर आम लोगों की धारणाओं को पुष्ट किया है कि यह कण्व ऋषि का आश्रम स्थल था। ऐसा भी कहा जाता है कि यहीं पर शकुन्तला ने अपना बाल्यकाल व किशोरावस्था व्यतीत की थी।

मन्दिर के गर्भगृह में काले पत्थर का चतुर्मुख शिवलिंग है। मन्दिर की विशेषता यह है कि सूर्य की प्रथम किरण मन्दिर के 20–25 फीट भीतर स्थित शिवलिंग पर सीधी पड़ती है। यहाँ स्थित भैरव मन्दिर में भैरव की आदमकद मूर्ति विराजमान है। वैसे तो यहाँ कई शिवलिंग है, लेकिन यहाँ एक ऐसा शिवलिंग भी है जो हजार मुखी है। यह शिवलिंग तीन फीट ऊँचा और एक फुट चौड़ा है।

भीमचौरी : कोटा से 50 किलोमीटर दूर दरा नामक स्थान की नाभि में भीम चौरी अवस्थित है। एक लम्बे–चौड़े पत्थर के दो स्तरीय चबूतरे पर कुछ खम्भों वाला तक ध्वस्त मन्दिर है। भीमचौरी या भीम चंवरी कहा जाता है। इतिहासकार इसे गुप्तकालीन मानकर इसका निर्माणकाल चौथी शताब्दी बताते हैं। यहाँ पर 44 फीट चौड़े और 75 फीट लम्बे बड़े–बड़े शिलाखण्डों से बने हर एक चबूतरे पर भीमचौरी का मूल मन्दिर खण्डहर रूप में उपलब्ध है, जिसे भीम का मण्डप माना जाता है। मन्दिर में शिवलिंग की प्रतिष्ठा मानी गई है। कोटा के राजकीय संग्रहालय की एक प्रतिमा तांत्रिक पट्टिका पूरे हाड़ौती अंचल में अनूठी है जो विदेशों की यात्रा भी कर चुकी है। मकरमुख से अलंकृत इस पट्टिका में एक व्यक्ति को वाद्य यंत्र बजाते हुए देखा जा सकता है।

बूढ़ादीत का सूर्य मन्दिर : कोटा के पूर्व ग्वालियर की ओर जाने वाली सड़क पर दीगोद तहसील मुख्यालय से 14 किलोमीटर दूर दक्षिण में बूढ़ादीत गाँव में तालाब के पश्चिम किनारे पर पूर्वाभिमुख शिखर सूर्य मन्दिर स्थित है। पंचायतन शैली के मन्दिर में गर्भगृह और महामण्डप है। मण्डप का आधुनिकीकरण 18 वीं शताब्दी में कराया गया। मन्दिर आज भी अपने मूल रूप में विद्यमान है। सूर्य मन्दिर 9 वीं शताब्दी में निर्मित माना जाता है।

गेपरनाथ : चम्बल के तट पर स्थित महत्वपूर्ण शिवालयों में से गेपरनाथ शिवालय अपना विशिष्ट स्थान रखता है। यह एक ऐसा मनोरम स्थल है जहाँ मानव स्वतः ही विशाल शिलाखण्डों के मध्य अपने प्राचीन और समृद्ध अतीत को खोजने लगता है। इस मन्दिर का निर्माणकाल 5 वीं से 11 वीं सदी के मध्य माना गया है। आस–पास बिखरे विस्तृत सांस्कृतिक अवशेषों से इस बात के प्रमाण मिले हैं कि कभी इस क्षेत्र में मौर्य, शुग कुषाण, परमार तथा गुप्त वंशीय राजाओं का शासन था।

कोटा नगर से 22 किलोमीटर दूर कोटा–रावतभाटा मार्ग पर ग्राम रथकांकरा के समीप चम्बल घाटी में 300 से 350 फीट गहराई में स्थित गेपरनाथ महादेव मन्दिर है। यहाँ हर वर्ष शिवरात्रि पर मेला लगता है।

विभीषण मन्दिर : कोटा से 16 किलोमीटर दूर कैथून में स्थित यह मन्दिर तीसरी से पांचवीं शताब्दी के मध्य का बताया जाता है। एक छतरी में स्थापित विशाल मूर्ति धड़ से ऊपर तक की है जिसे विभीषण की मूर्ति कहा जाता है, किन्तु कतिपय इतिहास विशेषज्ञ इस मूर्ति को हनुमान की मूर्ति बताते है।

अन्य दर्शनीय स्थल : शहर के अन्य दर्शनीय स्थलों में जग मन्दिर, घंटाघर, लक्की बुर्ज, सेवन वंडरर्स, घटोत्कच चौराहा, एरोड्रॉम सर्किल, छोटी व बड़ी समाधि, अधरशिला, कोटा बैराज, कोटा गढ़ पैलेस, राजकीय संग्रहालय, राव माधोसिंह संग्रहालय, उम्मेद क्लब भवन, महात्मागाँधी भवन, रंगबाड़ी, चिड़ियाघर, धाभाईयों के मन्दिर, नीलकण्ठ महादेव का मन्दिर प्रमुख है।

पर्यटक स्थल बून्दी :-

बून्दी राजमहल, तारागढ़, चौरासी खंभों की छतरी, रानी जी की बावड़ी, क्षार बाग, शिकार बुर्ज, जेतसागर, फूल सागर, नवल सागर, भीमलत, खटकड़ महादेव, रामेश्वर जी का नाला, श्री केशवराय पाटन, दुगारी पक्षी अभयारण्य, चित्रशाला इत्यादि।

पर्यटक स्थल झालावाड़ :-

पुरातत्व संग्रहालय, गढ़ भवन, रेनबसेरा, भवानी नाट्यशाला, गागरोन का किला, नौलखा किला, चन्द्रावती, सूर्य मन्दिर, शांतिनाथ जैन मन्दिर, अतिशय क्षेत्र चांदखेड़ी, मनोहरथाना का किला, नागेश्वर पार्श्वनाथ, बौद्धकालीन गुफाऐं।

पर्यटक स्थल बारां :-

रामगढ़, भण्डदेवरा, कपिलधारा, काकूनी, सीताबाड़ी, लक्ष्मीनाथ मन्दिर, जामा मस्जिद, ब्रह्माणी माता, शेरगढ़ दुर्ग एवं अन्य किले।

कोटा के विशिष्ट त्यौहार

दशहरा :

कोटा के प्रथम हाड़ा शासक राव माधोसिंह द्वारा 1579 में स्थापित परम्परा आज भी चली आ रही है, देश के दूरस्थ भागों से दुकानदार अपने सामानों की बिक्री के लिए यहां आते हैं। इसके अलावा उन्नत नस्ल के पशुओं का भी मेला लगता है। दशहरा के अवसर पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन होता है, इसमें अखिल भारतीय कवि सम्मेलन एवं मुशायरा सुनने जनता की अपार भीड़ उमड़ती है।

होली :

रंग और गुलाल का त्यौहार होली यहा वल्लभ संप्रदाय के सप्त प्रधान उपपीठों में प्रथम महाप्रभु की पीठिका होने के कारण फाल्गुन में मन्दिरों का वातावरण बृज जैसा रहता है।

न्हाण :

वीर सांगा गुर्जर की पुण्य स्मृति में सांगोद में न्हाणं प्रारम्भ हुआ, इसमें स्वांग बनकर सवारियाँ निकाली जाती हैं तथा इसमें न्हाण बिना रंग, गुलाल व बिना पानी के साथ खेलने की परम्परा है।

गणगौर :

होलिका दहन के पश्चात होली की राख से 16 पिण्डी बनाकर गणगौर आने तक कुंवारी कन्याऐं इनकी पूजा अच्छे घर व वर की कामना, सुहागिन स्त्रियाँ सुहाग के लिए ईसर, गौर की पूजा करती है।

सुश्री गिरिराज किशोरी दाधीच
(वरिष्ठ व्याख्याता) डाइट कोटा

हाड़ौती दर्शन एवं इतिहास

नामकरण एवं क्षेत्रफल :

जन साधारण में प्रचलित हाड़ावती शब्द ही कालान्तर में हाड़ौती के नाम से प्रचलित हुआ जो हाड़ा शासकों "हाड़ा" शब्द की उत्पत्ति किंवदन्ती के अनुसार अस्थि शब्द और 'हिडि' धातु से हुई मानी जाती है। डॉ. मथुरालाल शर्मा ने माणिकराव की छठी पीढ़ी में उत्पन्न हंसराज अथवा हाड़ाराव से हाड़ा वंश की उत्पत्ति मानी है। "हाड़ा" शब्द का प्रयोग वंश विशेष के लिए 11 वीं शताब्दी के पश्चात ही हुआ भाषा विज्ञान के अनुसार हाड़ी या हाड़ा शब्द का प्रयोग अपभ्रंश में घुमक्कड़ लोगों के लिए प्रयोग होता था। हाड़ौती शब्द का प्राचीनतम उल्लेख संवत 1517 (1461) ई. के कुम्भलगढ़ के शिलालेख में मिलता है। हाड़ावती देशपतीन से जित्वा तन्मण्डल चात्मवशी चकार कविवर सूर्यमल्ल मिश्रण ने इस क्षेत्र के लिए हड्डवती शब्द का प्रयोग किया है।

हहुन करि विख्यात द्रव हडैवती यह देश चहुवान कुल चक्र को रवि जहराम नरेश हाड़ौती बून्दी कोटा झालावाड़ रियासतों के संयुक्त भौगोलिक क्षेत्रफल को कहा जाता है जो वर्तमान तक प्रचलित है। वर्तमान मेडूल क्षेत्र में बून्दी कोटा झालावाड़ और बारां जिले शामिल है। सर्व प्रथम हाड़ौती में हाड़ा वंश की नींव बम्बावदा के चौहान वंश के हाड़ा शाखा के राजा देवीसिंह हाड़ा ने डाली। देवीसिंह हाड़ा ने बूंदी नगर के उसरा जाति के जेता मीणा को उमरथणा गांव में 1241 ई. में पराजित कर बूंदी पर अधिकार स्थापित किया और प्रथम हाड़ा राज्य की नींव रखी। इसी हाड़ा राज्य से कालान्तर में 1631 ई. में कोटा राज्य और 1838 ई. में कोटा से झालावाड़ राज्य निकले। बून्दी का क्षेत्रफल उस समय 2220 वर्ग मील कोटा कोटा का क्षेत्रफल 5684 वर्ग मील और झालावाड़ का क्षेत्रफल 810 वर्गमील था। वर्तमान में हाड़ौती क्षेत्र के जिलों में बून्दी का क्षेत्रफल 5628 वर्ग किमी. कोटा का क्षेत्रफल 12436 वर्ग किमी. झालावाड़ का क्षेत्रफल 6219 वर्ग किमी. और बारां का क्षेत्रफल 6995.4 वर्ग किमी. है।

मानव में कला बोध जीवन के प्रारम्भिक काल से ही था। उसने ऐसे प्रस्तर उपकरणों का निर्माण किया जो उसकी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की आपूर्ति में सहायक थे। मध्य एवं नवपाषाण कालीन शैलाश्रयों में उपलब्ध चित्रांकन कला के प्रति उनके आकर्षण को प्रकट करता है। हाड़ौती क्षेत्र के विभिन्न स्थलों से प्रकाश में आये दर्जनों शैलाश्रयों के चित्रों की कला के जन जीवन पक्ष को सशक्तिकरण मिला है। ये शैलाश्रय मध्य पाषाण काल से आरम्भिक ऐतिहासिक युग का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन्हें रंगीन छायाचित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया, पर्वत घाटियों व नदी के किनारे स्थित शौलाक्षय में हमारे पूर्वजों ने वर्षो से छतों दीवारों पर लाल गेरू, लाल, हरे, पीले, काले व सफेद रंगों में रेखाओं से अपनी कलात्मक अभिरूचि को चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया।

चट्टानों की कमजोर पर्तो के क्षरण एवं पानी के कटाव से बने शैलाश्रयों का उपयोग मानव ने अपने आवास के लिए किया तथा फुर्सत के समय में अपने चित्रांकन कर उन्हें अनायास ही कला दीर्घाओं का स्वरूप प्रदान कर दिया।

इस अंचल में शैलाश्रयों की खोज का श्रेय पदम् श्री डॉ. वी.एस. वाकणकर, डॉ. जगतनरायण तथा डॉ. गिरिराज कुमार को जाता है। डॉ. गिरिराज कुमार ने अपने शोधकार्य के सिलसिले में 600 शैलाश्रयों का सर्वेक्षण किया जिनमें से झालावाड़ क्षेत्र की कालीसिंध घाटी में आमझिरी नाला, चंगेरी नाला, कोलवी, खेजड़िया मुख्य है। कालक्रम की दृष्टि से शैलाश्रयों के चित्रों का काल विभाजन निम्नानुसार है।

1. मध्य पाषाण काल :

इस अंचल में अधिकतर नदियों का बहाव अनवरत रहा। जिससे उनके आस–पास सघन हरियाली व वन होने के कारण इस काल के प्रमुख जानवरों में वन, वृषभ, हाथी, गैंड़े, नील गाय, चिंकारा, बारहसिंगा व हिरण आदि थे। गागरोन दुर्ग की तलहटी में काली सिंध तथा आहू नदी का भीलवाड़ी गांव के पास के क्षेत्र में इस काल के उपकरण प्रचुर मात्रा में मिले जो राजकीय संग्रहालय कोटा में सुरक्षित हैं।

2. लघु पाषाण काल :

इस काल तक आते–आते मानव ने अपने सोच व जीवन स्तर में प्रगति कर ली थी। अब उनका जीवन बहुआयामी हो गया, साथ ही प्रस्तर उपकरणों की प्रविधि भी विकसित हो चुकी थी। इस काल में धनुर्विद्या के आविष्कारों के कारण मानव अपने संघर्ष की ओर अग्रसर हो चला था। इस काल के प्रस्तर उपकरणों में चन्द्राकृति, बाणाग्र, उत्कीर्णक, लम्बे फलक तथा तिरछे कटे अस्मपिण्ड त्रिकोण आदि प्रमुख हैं। बून्दी के गरड़दा से खोजा गया शिकार से सम्बन्धित शैल चित्र इस काल की ही देन है।

3. ताम्र पाषाण काल :

इस काल में मानव का 'खाद्य संग्रह' की अवस्था से खाद्य उत्पादन की अवस्था में प्रवेश एक क्रान्तिकारी घटना थी। अब पाषाण उपकरणों का स्थान ताम्र उपकरणों ने छीन लिया, जिसमें ताम्र परशु, कुल्हाड़ी, छैनी, मछली पकड़ने का कांटा आदि प्रमुख थे। इस युग के मानव की चित्रांकन की विषय वस्तु स्थूल न होकर सूक्ष्म हो गई और उसके चित्र सृजनात्मक व रहस्यवादी होते गये। गरड़दा के शैलाश्रय में चित्रित पक्षी की पीठ पर मानव सवार का रंगीन छायाचित्र बृजविलास संग्रहालय, कोटा की दीर्घा में प्रदर्शित है।

ऐतिहासिक काल :

इस युग में मानव की सोच बहुआयामी हो गयी थी। यद्यपि शैलाश्रयों में चित्रांकन इस काल में भी हुआ, गरड़दा के शैलाश्रयों के चित्रों जिनमें पशु व विभिन्न आकृति के माण्डने आदि तथा पशु जगत को चित्रण के रंगीन छायाचित्र कला दीर्घा में प्रदर्शित किये गये, लेकिन अब मानव जीवन पूरी तरह से कृषिकार्य और पशु पालन पर आधारित हो गया था। हाड़ौती क्षेत्र में रंगपुर, केशवराय पाटन, नमाना, खटकड़, धाकड़खेड़ी, कैथून आदि सांस्कृतिक स्थल उल्लेखनीय हैं, जहाँ से मोर्य, शुंग, कुषाण तथा गुप्तकालीन अनेक जीवनोपयोगी कलात्मक सामग्री प्रकाश में आयी जिसमें मानव व पशु मृण मूर्तियाँ, पक्की मिट्टी के शतरंज के पासे व मुहरे, कर्ण आभूषण, मिट्टी व पत्थर के मनके आदि सामग्री खोजी जा चुकी है।

वर्तमान में ये लेख कोटा के बृजविलास संग्रहालय में प्रदर्शित है। झालावाड़ क्षेत्र मौर्यों के अधीन रहा जहाँ बौद्ध धर्म को भी प्रश्रय मिला। कोलवी, विनायका, हाथी गोड़ तथा गुनाई से मिली पांच दर्जन से अधिक बौद्ध गुफाएँ इसके प्रमाण है।

श्याम सुन्दर शर्मा
अध्यापक
राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, फाबा, कोटा (राज.)

हाड़ौती के उद्योग एवं खनिज

रियासत के समय कोटा में महत्वपूर्ण देशी उद्योग सूती वस्त्र उद्योग था। कोटा के मलमल (वस्त्र) की स्थानीय मांग अधिक थी, जो सफेद एवं रंग बिरंगी शैलियों में बुना जाता था।

खानें और खनिज :

इमारती पत्थर एवं कतिपय खनिज जिले की प्रमुख खनिज सम्पदा है। सैण्ड स्टोन जिले के पश्चिमी भाग तथा रथकांकरा, बोराबास, नान्ता, कसार और रांवठा में पाया जाता है। यह प्रायः इमारत निर्माण में प्रयुक्त होता है तथा इसका निर्यात भी किया जाता है।

लाइम स्टोन :

जिले के चारों ओर विन्ध्य श्रेणी से प्राप्त किया जाता है। जगपुरा, कसार, मोड़क, किशनपुरा, कोलीपुरा, रानपुरा, पीपल्दा एवं चेचट क्षेत्रों में पाया जाता है। यह पत्थर चूना प्राप्त करने का महत्वपूर्ण स्त्रोत है तथा यह फर्श बनाने या टाईल लगाने के काम भी आता है।

कोटा स्टोन :

हाड़ौती में खनन किया जाने वाला पत्थर कोटा स्टोन के नाम से भारत में ही नहीं वरन दुनियाँ भर में अपनी पहचान रखता है। इसकी लोकप्रियता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि भारतीय संसद, राष्ट्रपति भवन और विक्टोरिया मेमोरियल में इस पत्थर का उपयोग बहुतायत से किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसका उपयोग लंदन की पी.एण्ड टी पावर टी पावर एवं ट्रिनिटी कॉलेज केम्ब्रीज में किया गया है। इसके अलावा ज्यूरिक, फ्रेंकफर्ट, हेमबर्ग में भी विभिन्न भवनों के निर्माण में कोटा स्टोन का उपयोग किया गया है।

कोटा स्टोन हल्के नीले और भूरे रंग का फ्लोरिंग व डेकोरेटिव पत्थर है। कोटा स्टोन भू–गर्भ में जमीन की सतह से 25 से 30 फीट नीचे मिट्टी हटाने के बाद खनन करके निकाला जाता है। खनन के दौरान आधा इंच से लेकर 8 इंच मोटाई तक का पत्थर निकलता है। आज कोटा जिले में कोटा नगर, रामगंजमण्डी, चेचट, मोड़क और मण्डाना में कोटा स्टोन प्रसरण की लगभग 1200 ईकाईयाँ कार्यशील हैं। इस प्रकार स्टोन यहाँ का प्रमुख व्यवसाय है।

उद्योग एवं उत्पाद :

1960 के दशक से ही कोटा औद्योगिकीकरण की ओर बढ़ रहा है। कोटा में औद्योगिकीकरण की तीव्रता, सस्ती बिजली पानी की सुविधा, रियायती दरों पर भूमि की उपलब्धता एवं सस्ती मजदूरी का परिणाम है। ब्राडगेज रेलवे लाईन एवं कोटा से दिल्ली मुम्बई आने जाने की सुविधा ने भी कोटा को तीव्रता से देश एवं राज्य के औद्योगिक नक्शे में स्थान दिलाया है।

जे.के. सिन्थेटिक्स लिमिटेड :

यह संस्था 1962 ई. में स्थापित हुई है। आरम्भ में नायलॉन के टायरकोर्ड एवं नायलॉन तथा पॉलिस्टर के मिश्रण से बने रेशों का उत्पादन भी होने लगा।

फैक्ट्री का मुख्य उत्पाद बुनाई हेतु सूत के रेशे जैसे जीरो ट्विस्ट, स्ट्रेम्प एवं ट्विस्ट सूत विभिन्न रंगों में मौजों और ऊनी कपड़ों के लिए तैयार करना था। पैराशूट रस्सी एवं मछली पकड़ने के जाल भी तैयार किये जाते हैं। (वर्तमान में बंद हो गया है।)

श्रीराम रेयन्स :

1962 में राजस्थान रेयन्स के अधीन इसकी स्थापना हुई। फैक्ट्री में कृत्रिम रेशा, टायर के धागे, रस्सी, फैब्रिक, कार्बनडाई सल्फाइड, सोडियम सल्फेट तथा सल्फ्यूरिक एसिड का उत्पादन होता है।""

लघु स्तरीय उद्योग

वर्ष 1974–75 में लघु उद्योगों को राज्य औद्योगिक विभाग द्वारा पंजीकृत किया गया जो बड़ें उद्योग समूहों में समाहित थे।

कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग :

इस जिले का प्रमुख लघु उद्योग हाथ करधे पर सूती वस्त्र एवं डोरिया साड़ी की बुनाई है। कोटा के समीप कैथून एवं मांगरोल नामक स्थान (वर्तमान में बारां जिला) मसूरिया वस्त्रों हेतु प्रसिद्ध है। इसके अलावा श्वेत एवं रंगीन सूती मलमल वस्त्रों का निर्माण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वस्त्रों पर चांदी व सोने के तारों से कशीदाकारी की जाती है।

कुछ ग्रामीण उद्योगों जैसे चूना, मिट्टी के बर्तन, हैण्ड पम्प, घाणी का तेल, गुड़ खांडसारी एवं चमड़ा उद्योगों को राजस्थान खादी एवं ग्रामीण औद्योगिक बोर्ड द्वारा प्रोत्साहन, अनुदान एवं ऋण प्रदान किये जाते हैं।

कोटा सुपर थर्मल पावर स्टेशन :

यह उद्योग विद्युत उत्पादन हेतु राज. सरकार का बड़ा उपक्रम है। इसमें वायु प्रदूषण रोकने हेतु ई.एस.पी. की स्थापना की गई है जो कि अपनी सीमाओं में संतोष जनक कार्य करता है।

चम्बल फर्टिलाइजर्स एण्ड केमीकल्स लिमिटेड, गढ़ेपान :

यह खाद के उत्पादन का सबसे बड़ा केन्द्र है। सन् 2004 से शिपिंग ट्रांसपोर्टेशन में शुरू किया है। इस उद्योग में वायु एवं जल प्रदूषण नियंत्रण हेतु पर्याप्त उपकरण लगे हैं। जिनसे मानकों के आधार पर प्रबोधन में सहायता मिलती है। उद्योग अपना सामाजिक दायित्व पूरा करने में पूर्ण सहयोग प्रदान करने में रूचिशील है।

हंसा सक्सेना

पुस्तकालयाध्यक्ष, डाइट, कोटा